राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर

एस.बी. सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 18/2007

बलवीर सिंह

----अपीलार्थी

बनाम

आर.एफ.सी. श्रीगंगानगर एवं अन्य

----प्रतिवादीगण

अपीलार्थी(गण) के लिए	:	श्री एस.एल. जैन
प्रतिवादी(गण) के लिए	:	श्री देवेश ए. पुरोहित

माननीय सुश्री न्यायमूर्ति रेखा बोराना

<u>आदेश</u>

<u>रिपोर्ट करने योग्य</u>

<u>03/07/2024</u>

1. वर्तमान पुनरीक्षण याचिका जिला न्यायाधीश, श्रीगंगानगर द्वारा सिविल निष्पादन प्रकरण संख्या 64/2000 में पारित दिनांक 11.09.2006 के आदेश के विरूद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके तहत आपत्तिकर्ता/याचिकाकर्ता-बलवीर सिंह द्वारा प्रस्तुत आदेश 21 नियम 22, सीपीसी के तहत आपत्तियों को खारिज कर दिया गया था।

2. तथ्य यह है कि राजस्थान वित्तीय निगम (जिसे आगे आरएफसी कहा जाएगा) द्वारा राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 (जिसे आगे आरएफसी कहा जाएगा) की धारा 31 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया गया था, जिसमें कहा गया था कि गुरुचरण सिंह (गैर याचिकाकर्ता संख्या 2) को ट्रक खरीदने के लिए आरएफसी द्वारा 1,99,000/- रुपए का ऋण प्रदान किया गया था। बलवीर सिंह (याचिकाकर्ता) और शकुंतला (गैर याचिकाकर्ता संख्या 3) उक्त ऋण के लिए गुरुचरण सिंह के गारंटर थे। ऋणदाता गुरुचरण सिंह ऋण चुकाने में विफल रहे और इसलिए, आरएफसी को गारंटर बलवीर सिंह और शकुंतला की संपत्तियों से बकाया राशि वसूलने का हकदार माना जाना चाहिए।

3. गुरुचरण सिंह या बलवीर सिंह द्वारा उक्त आवेदन का कोई जवाब दाखिल नहीं किया गया। हालांकि, शकुंतला ने उनके द्वारा इस तरह के किसी भी गारंटी डीड के निष्पादन से इनकार करते हुए एक जवाब दाखिल किया और प्रस्तुत किया कि मुख्य देनदार यानी गुरुचरण सिंह के खिलाफ कार्यवाही किए बिना, उनकी संपत्तियों से कोई वसूली नहीं की जा सकती।

4. 1951 के अधिनियम की धारा 31 के तहत उक्त आवेदन पर दिनांक 28.05.1999 के आदेश द्वारा आरएफसी के पक्ष में निर्णय लिया गया और यह माना गया कि आरएफसी गारंटरों की संपत्तियों से राशि वसूलने का हकदार है।

5. इसके बाद आरएफसी ने 13,36,208 रुपये की राशि की वसूली के लिए गारंटरों यानी वर्तमान याचिकाकर्ता बलवीर सिंह और अन्य गारंटर शकुंतला के खिलाफ 02.12.2004 को निष्पादन याचिका दायर की, जिसे बाद में संशोधित कर 6,82,359 रुपये कर दिया गया।

6. याचिकाकर्ता बलवीर सिंह ने उक्त निष्पादन कार्यवाही में आदेश 21 नियम 22, सी.पी.सी. के तहत आपत्तियां दर्ज कीं, जिसमें कहा गया कि निष्पादन याचिका स्वयं अधिनियम 1951 की धारा 31 के मद्देनजर बनाए रखने योग्य नहीं थी और इसे छोड़ दिया जाना चाहिए। यह भी प्रस्तुत किया गया कि जब तक कि मुख्य देनदार से वसूली की मांग नहीं की जाती है, तब तक गारंटरों के खिलाफ कार्यवाही जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसके अलावा, ट्रक (आरएफसी द्वारा जब्त) की नीलामी से वसूल की गई राशि भी समायोजित की जानी चाहिए।

7. वर्तमान याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत की गई उक्त आपत्तियों से व्यथित होकर दिनांक 11.09.2006 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया है, वर्तमान पुनरीक्षण याचिका पेश की गई है।

8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दिनांक 11.09.2006 का आक्षेपित आदेश, अधिनियम 1951 की धारा 31 और 32 के मूल प्रावधानों का पूर्णतः उल्लंघन है, क्योंकि न्यायालय द्वारा अधिनियम 1951 की धारा 31 के अनुसार कोई डिक्री पारित नहीं की जा सकती थी। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अधिनियम 1951 की धारा 31 ही वह सक्षम प्रावधान है जिसके अनुसार न्यायालय को मूल ऋणी के दायित्व के साथ-साथ जमानतदार की देयता को लागू करवाने का अधिकार है, लेकिन किसी भी तरह से न्यायालय उक्त प्रावधान के अनुसार कोई डिक्री पारित करने में सक्षम नहीं है।

9. वकील ने आगे कहा कि जब प्रतिवादी-आरएफसी द्वारा प्रस्तुत 1951 के अधिनियम की धारा 31 के तहत आवेदन पर कोई डिक्री पारित नहीं की जा सकती

थी, तो ऐसे किसी भी आदेश/डिक्री के निष्पादन के लिए कोई भी याचिका भी बनाए रखने योग्य नहीं कही जा सकती। उन्होंने तर्क दिया कि निष्पादन कार्यवाही की स्थिरता के संबंध में जमानतदार द्वारा उठाई गई आपत्ति बहुत ही उचित थी और उसे बनाए रखा जाना चाहिए था।

अपने तर्कों के समर्थन में, वकील ने इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पीटम ऑयल एंड फ्लोर मिल बनाम आरएफसी और अन्य (2015) 2 डब्ल्यूएलएन 105 और एनएलपी ऑर्गेनिक्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम राजस्थान वित्तीय निगम (2007) एआईआर (राजस्थान) 10 के मामलों में पारित निर्णयों पर भरोसा किया।

10. इसके विपरीत, प्रतिवादी-आरएफसी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि 1951 के अधिनियम की धारा 31 में मुख्य देनदार और जमानतदार के लिए अलग-अलग प्रावधान हैं। जहां तक मुख्य देनदार का संबंध है, यह उसकी संपत्ति की प्रत्यक्ष कुर्की और जब्ती का प्रावधान करता है, लेकिन जहां तक जमानतदार का संबंध है, उसे कारण बताओ नोटिस जारी किया जाना है और जमानतदार द्वारा उक्त कारण बताए जाने के बाद, न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुसार वित्तीय निगम के दावे की जांच करने की आवश्यकता है। उक्त जांच किए जाने के बाद, न्यायालय, 1951 के अधिनियम की धारा 32(7)(डीए) के अनुसार, जमानतदार की देयता के प्रवर्तन का निर्देश दे सकता है या दावे को खारिज कर सकता है।

11. वर्तमान मामले में, न्यायालय ने जमानतदारों में से एक द्वारा दायर उत्तर पर विचार करने के पश्चात आवेदक-आरएफसी को जमानतदार की देयता लागू करने का अधिकार दिया, जो कि उक्त प्रावधान के पूर्णतः अनुरूप है। इसलिए, उक्त प्रावधान के अनुसार उक्त आदेश पारित होने के पश्चात आवेदक-आरएफसी के पास उपलब्ध एकमात्र उपाय यह था कि इसे अधिनियम 1951 की धारा 32(8) के अंतर्गत दिए गए आदेश के अनुसार निष्पादित किया जाए।

अपने तर्कों के समर्थन में, अधिवक्ता ने महाराष्ट्र राज्य वित्तीय निगम बनाम जेसी ड्रग्स एंड फार्मास्यूटिकल्स प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य (1991) 2 एससीसी 637 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भरोसा किया।

12. पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया गया।

13. 1951 के अधिनियम की धारा 31 और 32 इस प्रकार है:

"31. वित्तीय निगम द्वारा दावों के प्रवर्तन के लिए विशेष प्रावधान-- (1) जहां कोई औद्योगिक प्रतिष्ठान, किसी समझौते का उल्लंघन करते हुए, किसी ऋण या अग्रिम या उसकी किसी किस्त के पुनर्भुगतान में या निगम द्वारा दी गई किसी गारंटी के संबंध में अपने दायित्वों को पूरा करने में कोई चूक करता है या वित्तीय निगम के साथ अपने समझौते की शर्तों का पालन करने में अन्यथा विफल रहता है या जहां वित्तीय निगम किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान से धारा 30 के तहत किसी ऋण या अग्रिम का तत्काल पुनर्भुगतान करने की अपेक्षा करता है और औद्योगिक प्रतिष्ठान ऐसा पुनर्भुगतान करने में विफल रहता है, तो इस अधिनियम की धारा 29 और संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) की धारा 69 के प्रावधानों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, वित्तीय निगम का कोई भी अधिकारी, जिसे बोर्ड द्वारा इस संबंध में सामान्यतः या विशेष रूप से प्राधिकृत किया गया हो, उस जिला न्यायाधीश को आवेदन कर सकता है, जिसके अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के भीतर औद्योगिक प्रतिष्ठान अपना पूरा या पर्याप्त भाग व्यवसाय करता है, निम्नलिखित में से एक या अधिक राहत के लिए, अर्थात्ः-

(क) ऋण या अग्रिम के लिए सुरक्षा के रूप में वित्तीय निगम को गिरवी, बंधक, आडंबर या सौंपी गई संपत्ति की बिक्री के लिए आदेश के लिए; या

(एए) किसी जमानतदार के दायित्व को लागू करने के लिए; या

(ख) औद्योगिक प्रतिष्ठान के प्रबंधन को वित्तीय निगम को हस्तांतरित करने के लिए; या

(ग) औद्योगिक प्रतिष्ठान को बोर्ड की अनुमति के बिना औद्योगिक प्रतिष्ठान के परिसर से अपनी मशीनरी या संयंत्र या उपकरण को स्थानांतरित करने या हटाने से रोकने के लिए अंतरिम निषेधाज्ञा के लिए, जहां ऐसा हटाने की आशंका है।

(2) उप-धारा (1) के तहत एक आवेदन में वित्तीय निगम के लिए औद्योगिक प्रतिष्ठान की देयता की प्रकृति और सीमा, जिस आधार पर इसे बनाया गया है और ऐसे अन्य विवरण जो निर्धारित किए जा सकते हैं, बताए जाएंगे।

32. धारा 31 के अधीन आवेदनों के संबंध में जिला न्यायाधीश की प्रक्रिया.- (1) जब आवेदन धारा 31 की उपधारा (1) के खंड (क) और (ग) में उल्लिखित अनुतोषों के लिए हो, तो जिला न्यायाधीश औद्योगिक प्रतिष्ठान की प्रतिभूति या उसकी संपत्ति का उतना भाग कुर्क करने का अंतरिम आदेश पारित करेगा, जिसे बेचे जाने पर उसके अनुमान के अनुसार औद्योगिक प्रतिष्ठान की वित्तीय निगम के प्रति बकाया देयता के बराबर राशि प्राप्त होगी, साथ ही धारा 31 के अधीन की गई कार्यवाही की लागत भी औद्योगिक प्रतिष्ठान को अपनी मशीनरी, संयंत्र या उपकरण को स्थानांतरित करने या हटाने से रोकने वाले अंतरिम निषेधाज्ञा सहित या उसके बिना होगी।

(1ए) जब आवेदन धारा 31 की उपधारा (1) के खंड (एए) में उल्लिखित राहत के लिए हो, तो जिला न्यायाधीश जमानतदार को नोटिस जारी करेगा, जिसमें नोटिस में निर्दिष्ट तिथि पर कारण बताने के लिए कहा जाएगा कि उसकी देयता को लागू क्यों न किया जाए।

(2) जब आवेदन धारा 31 की उपधारा (1) के खंड (बी) में उल्लिखित राहत के लिए हो, तो जिला न्यायाधीश औद्योगिक प्रतिष्ठान को अपनी मशीनरी, संयंत्र या उपकरण को स्थानांतरित करने या हटाने से रोकने के लिए अंतरिम निषेधाज्ञा प्रदान करेगा और औद्योगिक प्रतिष्ठान को नोटिस में निर्दिष्ट तिथि पर कारण बताने के लिए एक नोटिस जारी करेगा कि औद्योगिक प्रतिष्ठान का प्रबंधन वित्तीय निगम को क्यों न स्थानांतरित किया जाए।

(3) उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन कोई आदेश पारित करने से पूर्व या उपधारा (1ए) के अधीन नोटिस जारी करने से पूर्व, यदि जिला न्यायाधीश उचित समझे तो आवेदन करने वाले अधिकारी की जांच कर सकता है।

[(4) उपधारा (1) के अधीन आदेश पारित करते समय जिला न्यायाधीश औद्योगिक प्रतिष्ठान या कुर्क की गई प्रतिभूति के स्वामी को एक नोटिस जारी करेगा, जिसके साथ आदेश, आवेदन और उसके द्वारा अभिलिखित साक्ष्य, यदि कोई हो, की प्रतियां

संलग्न होंगी, जिसमें उसे नोटिस में निर्दिष्ट तिथि पर कारण बताने के लिए कहा जाएगा कि कुर्की के अंतरिम आदेश को क्यों न अंतिम बना दिया जाए या निषेधाज्ञा की पुष्टि क्यों न की जाए।

(4ए) यदि उपधारा (1ए) के अधीन नोटिस में निर्दिष्ट तिथि को या उससे पूर्व कोई कारण नहीं दिखाया जाता है, तो जिला न्यायाधीश तुरन्त जमानतदार के दायित्व को लागू करने का आदेश देगा।

(5) यदि उपधारा (2) और (4) के अधीन नोटिस में निर्दिष्ट तिथि को या उससे पूर्व कोई कारण नहीं दर्शाया जाता है, तो जिला न्यायाधीश तत्काल अंतरिम आदेश को अंतिम कर देगा और कुर्क की गई संपत्ति की बिक्री का निर्देश देगा या औद्योगिक प्रतिष्ठान का प्रबंधन वित्तीय निगम को हस्तांतरित कर देगा या निषेधाज्ञा की पुष्टि करेगा।

(6) यदि कारण दर्शाया जाता है, तो जिला न्यायाधीश वित्तीय निगम के दावे की जांच सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में निहित प्रावधानों के अनुसार करेगा, जहां तक ऐसे प्रावधान उस पर लागू हो सकते हैं।

(7) उपधारा (6) के अधीन जांच करने के पश्चात् जिला न्यायाधीश-

(क) कुर्की के आदेश की पुष्टि कर सकता है तथा कुर्क की गई संपत्ति की बिक्री का निर्देश दे सकता है;

(ख) कुर्की के आदेश में परिवर्तन कर सकता है ताकि संपत्ति का एक भाग कुर्की से मुक्त हो जाए तथा कुर्क की गई संपत्ति के शेष भाग की बिक्री का निर्देश दे सकता है;

(ग) संपत्ति को कुर्की से मुक्त कर सकता है;

(घ) निषेधाज्ञा की पुष्टि या उसे भंग कर सकता है;

(घ) जमानतदार के दायित्व के प्रवर्तन का निर्देश दे सकता है या इस निमित्त किए गए दावे को अस्वीकार कर सकता है; या

(ङ) औद्योगिक इकाई का प्रबंधन वित्तीय निगम को हस्तांतरित कर सकता है या इस निमित्त किए गए दावे को अस्वीकार कर सकता है:

बशर्ते कि खंड (सी) के तहत आदेश देते समय या खंड (डीए) के तहत जमानतदार के दायित्व को लागू करने के दावे को खारिज करने का आदेश देते समय या खंड (ई) के तहत औद्योगिक प्रतिष्ठान के प्रबंधन को वित्तीय निगम को हस्तांतरित करने के दावे को खारिज करने का आदेश देते समय, जिला न्यायाधीश वित्तीय निगम के हितों की रक्षा के लिए आवश्यक समझे जाने वाले ऐसे अतिरिक्त आदेश दे सकता है और कार्यवाही की लागत को इस तरह से विभाजित कर सकता है जैसा वह उचित समझे:

बशर्ते कि जब तक वित्तीय निगम जिला न्यायाधीश को यह सूचित नहीं करता है कि वह किसी संपत्ति को कुर्की से मुक्त करने या जमानतदार के दायित्व को लागू करने के दावे को खारिज करने या औद्योगिक प्रतिष्ठान को वित्तीय निगम को हस्तांतरित करने के दावे को खारिज करने वाले किसी आदेश के खिलाफ अपील नहीं करेगा, ऐसा आदेश उपधारा (9) के तहत निर्धारित अवधि की समाप्ति तक प्रभावी नहीं होगा जिसके भीतर अपील की जा सकती है या, यदि अपील की जाती है, जब तक कि उच्च न्यायालय अन्यथा निर्देश न दे। जब तक अपील का निपटारा नहीं हो जाता।

(8) इस धारा के अधीन सम्पत्ति की कुर्की या बिक्री का आदेश, जहां तक संभव हो, सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 (1908 का 5) में डिक्री के निष्पादन में सम्पत्ति की कुर्की या बिक्री के लिए दिए गए तरीके से लागू किया जाएगा, जैसे कि वित्तीय निगम डिक्री-धारक हो।

(8 ए) इस धारा के अधीन औद्योगिक प्रतिष्ठान का प्रबंधन वित्तीय निगम को हस्तांतरित करने का आदेश, जहां तक संभव हो, अचल सम्पत्ति के कब्जे या डिग्री के निष्पादन में चल सम्पत्ति के वितरण के लिए दिए गए तरीके से लागू किया जाएगा, जैसे कि वित्तीय निगम डिक्री-धारक हो।

(9) उपधारा (4ए), उपधारा (5) या उपधारा (7) के अधीन किसी आदेश से व्यथित कोई पक्षकार, आदेश की तारीख से तीस दिन के भीतर उच्च न्यायालय में अपील कर सकेगा और ऐसी अपील पर उच्च न्यायालय, पक्षों की सुनवाई के पश्चात, उस पर ऐसे आदेश पारित कर सकेगा जैसा वह उचित समझे।

(10) जहां किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान के संबंध में परिसमापन की कार्यवाही धारा 31 की उपधारा (1) के अधीन आवेदन किए जाने से पूर्व प्रारंभ हो गई है, वहां इस धारा की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वित्तीय निगम को औद्योगिक प्रतिष्ठान के अन्य ऋणदाताओं पर कोई वरीयता दी गई है, जो किसी अन्य विधि द्वारा उसे प्रदान नहीं की गई है।

(11) इस धारा के अधीन जिला न्यायाधीश के कार्य निम्नलिखित रूप में किए जा सकेंगे- (क) किसी प्रेसिडेंसी नगर में, जहां क्षेत्राधिकार रखने वाला नगर सिविल न्यायालय है, उस न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा और ऐसे न्यायालय की अनुपस्थिति में उच्च न्यायालय द्वारा; और (ख) अन्यत्र, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश [या सिविल क्षेत्राधिकार के प्रधान न्यायालय के किसी न्यायाधीश द्वारा भी।

(12) संदेहों को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि इस धारा के तहत अंतरिम निषेधाज्ञा देने में सक्षम किसी भी न्यायालय को रिसीवर नियुक्त करने और उससे संबंधित सभी अन्य शक्तियों का प्रयोग करने की भी शक्ति होगी।

14. 1985 के संशोधन अधिनियम 43 के तहत, 1951 के अधिनियम की धारा 31 की उपधारा 1 में खंड (एए) डाला गया। उक्त खंड के तहत, वित्तीय निगम को जमानतदार की देयता को लागू करवाने का अधिकार भी दिया गया। इसका मतलब यह है कि इसने वित्तीय निगम को 1951 के अधिनियम की धारा 31(1) के तहत "जमानतदार की देयता को लागू करवाने के लिए" आवेदन करने में सक्षम बनाया। धारा 31 और 32 के तहत प्रदान की गई प्रक्रिया के अनुसार, धारा 31(1) के तहत इस तरह के आवेदन पर, 1951 के अधिनियम की धारा 32 की उप-धारा 1ए के अनुसार जमानतदार को नोटिस जारी किए जाने हैं। यदि उक्त नोटिस के जवाब में कोई कारण नहीं दिखाया जाता है, तो 1951 के अधिनियम की धारा 32 की उप-धारा 4ए जमानतदार की देयता के प्रवर्तन के लिए तुरंत आदेश पारित करने का

विचार करती है। हालांकि, यदि कोई कारण दिखाया जाता है, तो वित्तीय निगम का दावा 1951 के अधिनियम की धारा 32 की उप-धारा 6 के तहत निर्धारित किया जाना है और उसके बाद, उप-धारा 7 के खंड (डीए) के अनुसार जमानतदार की देयता के प्रवर्तन के लिए निर्देश जारी किया जाना है या इस संबंध में किए गए दावे को अस्वीकार करना है।

15. वर्तमान मामले में, धारा 31(1) के तहत आवेदन आरएफसी द्वारा प्रस्तुत किया गया था और विद्वान न्यायालय ने, जमानतदारों से राशि वसूलने के लिए आरएफसी को हकदार मानते हुए, जमानतदार के दायित्व को लागू करने के लिए आदेश/निर्देश पारित करने के बजाय, आरएफसी के पक्ष में दिनांक 28.05.1999 की डिक्री के माध्यम से कार्यवाही समाप्त करने के लिए कार्यवाही आगे बढ़ाई। इसलिए, आरएफसी ने उक्त आदेश/डिक्री को निष्पादित करने के लिए कार्यवाही आगे बढ़ाई और इस उद्देश्य के लिए, 02.12.2004 को निष्पादन आवेदन प्रस्तुत किया।

16. इस न्यायालय का स्पष्ट मत है कि आरएफसी द्वारा प्रस्तुत निष्पादन याचिका को बनाए नहीं रखा जा सकता था क्योंकि 1951 के अधिनियम की धारा 31(1) के तहत आवेदन पर कोई डिक्री पारित नहीं की जा सकती थी। 1951 के अधिनियम की धारा 31 किसी डिक्री/धन डिक्री की परिकल्पना नहीं करती है। 1951 के अधिनियम की धारा 31 अपने आप में एक सक्षम प्रावधान है जो मुख्य ऋणी के साथ-साथ जमानतदार के दायित्व के प्रवर्तन के लिए पूरी प्रक्रिया प्रदान करता है। दायित्व के प्रवर्तन के लिए कार्यवाही, यदि कोई हो, जमानतदार की हो सकती है, केवल 1951 के अधिनियम की धारा 31 के अनुसार आरएफसी द्वारा की जा सकती थी। उक्त उद्देश्य के लिए, कोई स्वतंत्र/अलग निष्पादन याचिका प्रस्तुत नहीं की जा सकती थी और न ही न्यायालय द्वारा उस पर विचार किया जा सकता था।

17. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने महाराष्ट्र राज्य वित्तीय निगम (उपरोक्त) के मामले में निम्न प्रकार से निर्णय दियाः

> "हमारे मतानुसार, उसी सिद्धांत पर, ऐसे मामले में भी, जहां अधिनियम की धारा 31(1) के अंतर्गत आवेदन में दावा की गई राहत केवल व्यक्तिगत गारंटी देने वाले जमानतदार के दायित्व को लागू करने के लिए है, धारा 32 की उपधारा (4 ए) जहां कोई कारण नहीं दर्शाया गया है और उपधारा (7) का खंड (डीए) जहां कारण दर्शाया गया है, संहिता के प्रावधानों को मुकदमा दायर करने के चरण से जमानतदार के विरुद्ध

डिक्री प्राप्त करने के चरण तक काटने और समाप्त करने पर विचार करता है, एक आदेश पारित करना जिसे सीधे निष्पादित किया जा सकता है जैसे कि यह जमानतदार के विरुद्ध डिक्री हो जिसे मुकदमा दायर होने की स्थिति में पारित किया जा सकता है।"

न्यायालय ने आगे कहा:

"हालांकि, जहां जमानतदार द्वारा कारण दर्शाया गया है, उसकी देयता की सीमा धारा 32 की उपधारा (6) के अनुसार निर्धारित की जाएगी और इस प्रकार निर्धारित देयता ही धारा 32 की उपधारा (7) के खंड (डीए) के तहत लागू की जाएगी। इस बात को स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है कि ऊपर उल्लिखित देयता की सीमा अनिवार्य रूप से मौद्रिक मूल्य के संदर्भ में चीजों की प्रकृति में होगी, भले ही इसे धन की वसूली के लिए संहिता की धारा 2(2) में परिभाषित स्ट्रिक्टो सेन्सु डिक्री कहना संभव न हो।"

18. इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने एन.एल.पी. ऑर्गेनिक्स (उपरोक्त) के मामले में, इसी तरह की स्थिति से निपटते हुए और 1951 के अधिनियम की धारा 31 के प्रावधान की व्याख्या करते हुए, विशेष रूप से माना कि न्यायालय, 1951 के अधिनियम की धारा 31 के तहत एक आवेदन पर निर्णय लेते समय, केवल उन चार राहतों को ही प्रदान कर सकता है, जो धारा में उल्लिखित हैं और इसमें निहित राहतों से आगे नहीं जा सकते। इसके अलावा, 1951 के अधिनियम की धारा 31 के तहत आवेदन को एक मुकदमे में वाद नहीं कहा जा सकता है और निगम अपने बकाया के लिए डिक्री के लिए प्रार्थना नहीं कर सकता है। इसमें, न्यायालय ने निम्नानुसार माना:

“27. 1951 के अधिनियम की धारा 31(1) के तहत पहली राहत नहीं दी जा सकती। क्योंकि, वित्तीय निगम को देय सटीक राशि निर्धारित करने की शक्ति उक्त धारा के तहत नहीं दी गई है। गुजरात राज्य वित्तीय निगम बनाम नैटसन मैन्युफैक्चरिंग कंपनी प्राइवेट लिमिटेड और अन्य के अनुसार, “निगम का दावा जांच के लिए मौद्रिक दावा नहीं है, हालांकि यह निर्धारित करने के उद्देश्य से आंकड़ा निर्दिष्ट करना आवश्यक हो सकता है कि कितनी सुरक्षा बेची जानी चाहिए।”

> इसलिए, विद्वान न्यायाधीश यह निर्देश देने के हकदार नहीं हैं कि "निगम प्रतिवादियों से 1,36,04,991/- रुपये प्राप्त करने का हकदार है"। ऐसा निर्देश धन वसूली मुकदमे में पारित किया जा सकता है, लेकिन 1951 के अधिनियम की धारा 31(1) के तहत दायर आवेदन में नहीं।"

19. इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने पीटम ऑयल एंड फ्लोर मिल (उपरोक्त) के मामले में भी ऐसा ही विचार व्यक्त किया था, जिसमें न्यायालय ने कहा था कि 1951 के अधिनियम की धारा 31(1) के तहत किए गए आवेदन पर मनी डिक्री पारित नहीं की जा सकती।

20. कानून की उपर्युक्त स्थापित स्थिति को देखते हुए, आपत्तिकर्ता-याचिकाकर्ता बलवीर सिंह द्वारा प्रस्तुत आपत्तियों को इस सीमा तक स्वीकार किया जाना चाहिए कि आरएफसी द्वारा प्रस्तुत निष्पादन याचिका विचारणीय नहीं थी। चूंकि न्यायालय द्वारा 1951 के अधिनियम की धारा 31(1) के तहत किए गए आवेदन पर कोई डिक्री पारित नहीं की जा सकती थी, इसलिए दिनांक 28.05.1999 के आदेश को डिक्री के रूप में लागू नहीं किया जा सकता था।

21. अतः वर्तमान पुनरीक्षण याचिका स्वीकार की जाती है। दिनांक 11.09.2006 का आक्षेपित आदेश निरस्त किए जाने योग्य है तथा इसके द्वारा इसे निरस्त किया जाता है।

हालांकि, प्रतिवादी-आरएफसी को वर्तमान याचिकाकर्ता/जमानतदार द्वारा उठाई जाने वाली सभी कानूनी और वैध आपत्तियों के अधीन अधिनियम 1951 की धारा 31 (दिनांक 28.05.1999 के आदेश द्वारा तय) के तहत अपने आवेदन को पुनर्जीवित करने या अधिनियम 1951 की धारा 31 के तहत कार्यवाही फिर से शुरू करने की स्वतंत्रता होगी।

(रेखा बोराणा),जे

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक की सहायता से किया गया है ।
अस्वीकरण - यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा मे अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक

उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा एवं निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।